Kundkund-Kahan Sandesh

Dedicated to
Preserve, Propagate & Perpetuate Jain Adhyatma

है कामना यदि सिद्धि की ना चित्त को भरमाइये।
यह ज्ञान का घनपिण्ड चिन्मय आतमा अपनाइये॥
बस साध्य-साधक भाव से इस एक को ही ध्याइये।
अर आप भी पर्याय में परमातमा बन जाइये॥

ॐ સહાજાત્મ સ્વરૂપ સર્વજ્ઞદેવ પરમ ગુરૂ ॐ

Volume 73 | Published by Jain Adhyatma Academy of North America • Non-profit 501(c) (3) organization
601 West Parker Road, Suite 106 • Plano, Texas 75023 • Tel: 972-867-6535 • jainadhyatma@gmail.com
Jan/Feb/Mar 2013

JAANA presents
The 13th Annual Shibir
from June 30 (5 pm) to July 4 (Noon), 2013
followed by JAINA Convention
Walking the Path of Adhyatma
To Get Rid of Mithyatva continues...

This adhyatmic Shibir will take place at Jain Society of Greater Detroit. Please plan to attend this great opportunity to learn about 'who am I'. How to make this *Manushya Bhav Sarthak.*

We are immensly thankful to Jain Society of Greater Detroit for providing us the venue. Dr. Hukamchandji Bharill, Pandit Abhaykumar Jain and Pandit Sanjeevkumar Godha will share their vast knowledge that should lead us toward our goal.

Please fll out the enclosed registration form and mail with your check to:
JAANA - 601 West Parker Road, Suite 106, Plano, TX 75023
For directions log onto www.jsgd.org. For attending JAINA Convention, please log onto www.convention.jaina.org

SCHOLAR'S VISIT

Dr. Bharillji, Pandit Sanjeevji Godha & Pandit Abhaykumar Jain will visit North America between May & July. Please email me your request to invite any of the scholar.
Pradeep Jhanjhriji is also available during February and early March. If you are interested in inviting, please email to jainadhyatma@gmail.com.

JAANA will miss Dr. Dhirubhai Shah

Dr. Dhirubhai Shah of New York left his body on Dec. 13, 2012 at the age of 62. Dhirubhai was continuosly doing swadhyay of various Jain Shashtra. He was very fortunate to have Dr. Bharillji for a week in October at his side.

May his soul achieve liberation soon. Our condolences and prayers are with Rekhaben and two daughters.

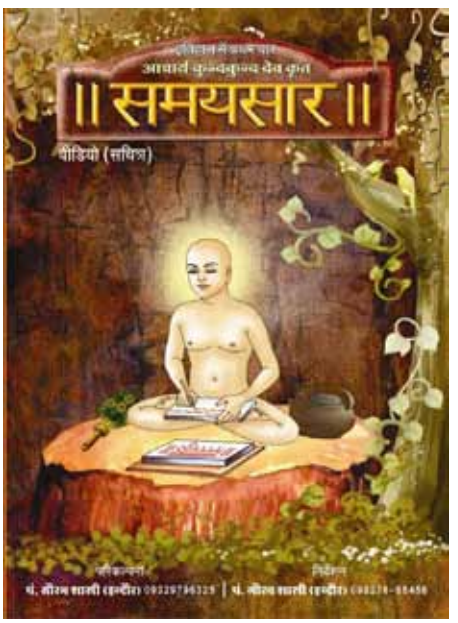

JAANA proudly presents SAMAYSAAR DVD Book

JAANA & Kundkund Kahan Young Association, Indore jointly presents frst time in the history Acharya Kundkund's SAMAYSAAR Video Book. It is a three DVD set nicely placed in a jacket with a colorful cover.

If you would like to have one for swadhyay, please send your email to : jainadhyatma@gmail.com.

Please treat this as Shashtraji with respect. We are in process of number of such projects. Of course, any such project requires your monetary contributions.
JAANA is a 501 c 3 - a non profit tax deductible organization. Please send your contributions to: JAANA and mail to
Atul Khara, 601 W. Parker Road, Suite 106, Plano, TX 75023

॥ परमात्मने नमः ॥

परमागम-चिंतामणि

द्रव्यदृष्टि-मार्गप्रकाशक, स्वानुभवप्रेरणामूर्ति,
पूज्य गुरुदेव श्री कानजीस्वामी की १११वीं जन्म शताब्दि के उपलक्ष में,
श्री दिगम्बर जैन आचार्यों, सन्तों आदि के १०१ आध्यात्मिक
ग्रंथों में से संकलित चिंतामणि-रत्न

* यहाँ शिष्य पूछता है—राग-द्वेष आदि कर्मजनित हैं अथवा जीव जनित हैं? उसका उत्तर—स्त्री और पुरुष इन दोनों के संयोग से उत्पन्न हुए पुत्र की भाँति, चूने और हल्दी के मिश्रण से उत्पन्न हुए वर्ण विशेष की भाँति, राग-द्वेष आदि जीव और कर्म इन दोनों के संयोगजनित हैं। नय की विवक्षा के अनुसार, विवक्षित एकदेश शुद्ध निश्चयनय से राग-द्वेष कर्मजनित कहलाते हैं और अशुद्ध निश्चयनय से जीवजनित कहलाते हैं। यह अशुद्ध निश्चयनय, शुद्ध निश्चयनय की अपेक्षा से व्यवहार ही है।

* प्रश्न— साक्षात् शुद्ध निश्चयनय से ये राग-द्वेष किसके हैं ? ऐसा हम पूछते हैं ?

उत्तर— साक्षात् शुद्ध निश्चयनय से, स्त्री और पुरुष के संयोग रहित पुत्र की भाँति, हल्दी और चूना के संयोगरहित रंग विशेष की भाँति उनकी (राग-द्वेषादि की उत्पत्ति ही नहीं है; तो कैसे उत्तर दें ? *(श्री नेमिचन्द्र-४८)* १२६

* अज्ञानी जीव कर्मकृत बाह्य विकार में भी निरंतर मैं हूँ—ऐसा मानता है। बराबर है—जिसने धतूरे के फल को खाया है वह क्या पत्थर को भी सुवर्ण नहीं मानता ? मानता ही है। *(श्री पद्मनन्दि आचार्य, अधि, श्लोक-३१)* १२७

* अहो ! आत्मा का तो यह सहज अद्भुत वैभव है कि एकतरफ से देखने पर वह अनेकता को प्राप्त है और एकओर से देखने पर सदा एकता को धारण करता है, एकओर से देखने पर क्षणभंगुर है और एकओर से देखने पर सदा उसका उदय होने से ध्रुव है, एकओर से देखने पर परम विस्तृत है और एकओर से देखने पर अपने प्रदेशों से ही धारण कर रखा हुआ है। १२८

(श्री अमृतचंद्राचार्य, समयसार-टीका-श्लोक-२७३)

* जो जीव पर्यायों में लीन है उनको पर समय कहने में आया है; जो जीव आत्मस्वभाव में स्थित हैं वे स्वसमय जानना। *(श्री कुंद-कुंदाचार्य, ९४)* १२९

* स्वज्ञेय आत्मा है और परज्ञेय आत्मा के सिवाय जगत के सब पदार्थ हैं, जिसने यह स्वज्ञेय और परज्ञेय का पेंच समझ लिया उसने सबकुछ जान लिया, ऐसा समझो। *(श्री बनारसीदास जी, नाटक, साध्य-साधक द्वार, पद-४७)* १३०

* परद्रव्य की चिंता में मग्न रहने वाला आत्मा, परद्रव्य जैसा हो जाता है और शुद्धआत्मा के ध्यान में मग्नआत्मा शीघ्र आत्मतत्व को स्वयं के शुद्ध स्वरूप को प्राप्त कर लेता है। *(श्री अमि तगति आचार्य, गाथा-५१)* १३१

* शुद्धआत्मा को जानना-अनुभवतः जीवशुद्धात्मा को ही पाता है और अशुद्धात्मा को जानना अनुभवतः जीवअशुद्धात्मा को ही पाता है।

(श्री कुंद-कुंदाचार्य, समयसार, गाथा-१८६) १३२

* जीव शुद्ध निश्चयनय से शुद्धात्मा का ध्यान करता हुआ, शुद्ध ही आत्मस्वरूप को प्राप्त करता है तथा व्यवहारनयका अवलंम्बन लेकर के अशुद्धात्मा का विचार करता हुआ अशुद्ध ही आत्मस्वरूप को प्राप्त करता है। ठीक है—मनुष्य सोने में से सोनामय कुंडल और लोहे में से लोहामय कुंडल ही उत्पन्न करता है। *(श्री पद्मनन्दि आचार्य, श्लोक-१८)* १३३

* हे जीव ! शुद्धनय से सब जीव शुद्ध ही हैं—ऐसा जानकर तू कभी भी शुद्ध आत्मतत्व की भावना को न छोड़। वास्तव में शुद्धनय का सेवन करने वाला जीव सदा शुद्ध रहा करता है। *(श्री नेमिश्वर-वचनामृत-शतक-१६)* १३४

* अशुद्ध संसारभाव में जीव के परिणाम ही व्याप्य, व्यापक होते हैं। इससे उस परिणाम को ही निश्चय से अशुद्धभाव का कर्त्ता कहने में आता है। भले निश्चय से द्रव्य को संसार का कर्त्ता कहने में आवे तो भी कोई दोष नहीं परन्तु ज्ञानदृष्टि में जीवद्रव्य को संसार का अकर्त्ता सदा समझना चाहिए। *(श्री दीपचंद जी, आत्मावलोकन, पृष्ठ-१२४)* १३५

* इस चैतन्य-आत्मा का स्वरूप वास्तव में ज्ञानावरणादि द्रव्यकर्म से भिन्न, रागादि भावकर्मों से रहित और शरीरादि नोकर्म से रहित है, उसे यथार्थपने जानना चाहिए। *(परमानन्द स्तोत्र, श्लोक-८)* १३६

* बँधा होवे वह छूटे, इसलिए बँधे को तो मोक्ष कहना ठीक है, और बँधा ही न हो, उसे छूटे कैसे कह सकते हैं ? उसी प्रकार यह जीव शुद्ध निश्चयनयकर बँधा हुआ नहीं है, इस कारण मुक्त हो कहना ठीक नहीं है। बँध भी व्यवहारनयकर है और मुक्ति भी व्यवहारनयकर है, शुद्ध निश्चयनयकर न बँध है, न मोक्ष है और न अशुद्धनयकर बँध है, इसलिए बँध के नाश का यत्न भी अवश्य करना चाहिए। यहाँ यह अभिप्राय है कि सिद्ध समान यह अपना शुद्धात्मा वीतराग निर्विकल्प-समाधि में लीन पुरुषों को उपादेय है, अन्य सब हेय हैं। *(श्री योगीन्द्रदेव, परमात्माप्रकाश, अधि ६८)* १३७

* अनेक प्रकार के विलास वाले कर्मों के साथ मेरी एकता होने पर भी जो उत्कृष्ट ज्योति सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और उत्कृष्ट आनंदस्वरूप है वह ही मैं हूँ, उसके सिवाय मैं दूसरा नहीं, ठीक भी है—स्फटिकमणि में काले पदार्थ के सम्बन्ध से कालापन उत्पन्न होने पर भी वह, तो मणि से भिन्न ही होता है। कारण यह है कि लोक में जो भी विकार होता है वह दो पदार्थों के निमित्त से ही होता है। *(श्री पद्मनन्दि आचार्य, पद्मनन्दि पंच विंशति, श्लोक ७)* १३८

* जो कोई अर्द्धक्षण भी परमात्मा से प्रीति करता है वह सब पापों को उसी तरह जला देता है जैसे काठ के पर्वत को आग भस्म कर देती है। हे जीव ! सर्वचिंता छोड़कर तू निश्चित होकर अपने चित्त को परमात्मा के पद में जोड़ और निरंतर शुद्धआत्मारूपी देव का दर्शन कर। ध्यान करते हुए शुद्धात्मा के दर्शन या अनुभव से जो परमानंद हे भाई ! तू पावेगा वह अनंत सुख, परमात्मा देव को छोड़कर और कहीं तीन लोक में नहीं मिल सकता है। *(श्री तारण स्वामी, ममलपाहुड, भाग-२ पृष्ठ-१७७)* १३९

* आत्मा, आत्मा में निजआत्मिक गुणों से समृद्ध आत्मा को एक पंचम भाव में जानता है और देखता है, उसने सहज एक पंचम भाव को छोड़ा नहीं है तथा अन्य ऐसे परभाव को कि जो वास्तव में पौद्गलिक विकार है उसे वह ग्रहण नहीं करता। *(श्री पद्मप्रीमलधारिदेव, नियमसार टीका, श्लोक-१२९)* १४०

* जो यह ज्ञानस्वरूप आत्मा ध्रुवपने और अचलपने ज्ञानस्वरूप होता हुआ परिणमता है भासता है वही मोक्ष का हेतु है। कारण कि वह स्वयं मोक्षस्वरूप है; उसके सिवाय जो अन्य कुछ है वह बंध का हेतु है। कारण कि वह स्वयं बंध स्वरूप है। इसलिए ज्ञानस्वरूप होना (ज्ञानस्वरूप परिणमना) अर्थात् कि अनुभूति करने का आगम में विधान अर्थात् आदेश है। *(श्री अमृतचन्द्राचार्य, समयसार-टीका, कलश-१०५)* १४१

* जो जीवात्मा को निरंतर कर्मों से बँधा हुआ देखता है वह कर्म से बँधा हुआ ही रहता है। परन्तु जो उसे मुक्त देखता है वह मुक्त हो जाता है, बराबर है मुसाफिर जिस नगर के मार्ग में चलता है उस ही नगर में वह पहुँचता है।

(श्री पद्मनन्दि आचार्य, पद्मनन्दि पंच विंशति, निश्चय पंचाशत, श्लोक-४८) १४२

* अपने आत्मारूपी कमल में रुचि या प्रीति का वही कारण है वही कार्य है। आत्मरुचि से ही प्रतीति प्रगाढ़ होती जाती है। चतुर्थ गुणस्थान में जो आत्मरुचिरूपी सम्यग्दर्शन है वही बढ़ते-बढ़ते श्रुतकेवली मुनिको प्रगाढ़ सम्यकत्व हो जाता है। आत्मरुचि ही दातार है, आत्मरुचि ही पात्र है, अपने आपको मनन करने से आत्मा का स्वभाव पुष्ट होता जाता है। आत्मा की प्रगाढ़ रुचि के समान कोई दातार नहीं है। सम्यग्दर्शन ही आत्मानंद प्रदान करता है। आत्मा को पुष्ट करते-करते उसको सिद्ध बना देता है।

(श्री तारणस्वामी, ममलपाहुड, भाग-१, पृष्ठ-९०) १४३

* जो मोक्ष का किंचित कथनमात्र (कहने मात्र) कारण है उसे भी (अर्थात्) व्यवहार-रत्नत्रय को भी भवसागर में डूबे हुए जीवने पहले भव-भवमें (अनेक भवों में) सुना है और आचरा (आचरण में लिया) है; परन्तु अरेरे ! खेद है कि जो सर्वदा एक ज्ञान है उसे (अर्थात् जो सदा एक ज्ञानस्वरूप ही है ऐसे परमात्म तत्व की) जीव ने सुना और आचरा नहीं है—नहीं है। *(श्री पद्मप्रभमलधारिदेव, नियमसार टीका, श्लोक-१२१)* १४४

* निर्मल सम्यग्दर्शन किसी दोष की तरफ दृष्टि नहीं रखता है, वह सकल दोषों से रहित परमात्मा को श्रद्धापूर्वक देखता है। वह तीन प्रकार के कर्मों पर दृष्टि नहीं रखता है। *(श्री तारणस्वामी, ज्ञान समुच्चयसार, श्लोक-२५३)* १४५

* बहुत कहने से और बहुत दुर्विकल्पों से बस होओ, बस होओ। यहाँ इतना ही कहना है कि इस परमार्थ को एकको ही निरंतर अनुभवो। कारण, कि जिनरस के फैलाव से पूर्ण जो ज्ञान उसके स्फुरायमान होने मात्र में जो समयसार (परमात्मा) उससे ऊँचा, वास्तव में दूसरा कुछ भी नहीं (समयसार सिवाय दूसरा कुछ भी सारभूत नहीं)। *(अमृतचन्द्राचार्य,)* १४६

* यहाँ कोई जानेगा कि शुभ-अशुभ क्रियारूप जो आचरणरूप, चारित्र है सो करने योग्य नहीं है उसी प्रकार वर्जन करने योग्य भी नहीं है ?

* उत्तर इस प्रकार है—वर्जन करने योग्य भी है। कारण, कि व्यवहार चारित्र में होता हुआ दुष्ट है, अनिष्ट है, घातक है, इसलिए विषय-कषाय के समान क्रियारूप चारित्र निषिद्ध है, ऐसा कहते हैं—शुभ-अशुभ करतूति (कृत्य) निषेध्य अर्थात् वर्जनीय है। *(श्री राजमल्ल जी, कलश टीका, कलश-१०८)* १४७

* जो जीव, अजीवतत्व को कि जो जीवतत्व से विधि द्वारा विभक्त है उसे यथार्थरूप से नहीं जानते, वे जीव चारित्रवान होने पर भी चारित्र का अनुष्ठान करने पर भी उस विविक्त शुद्ध और निर्मलात्मा को प्राप्त नहीं होते जो कि दोषों से रहित है। *(श्री अमितगति आचार्य, यो. प्र. अ, गाथा-५०)* १४८

* जैसे दुष्कार्य के उत्पादक हेतु को दुष्ट कहते हैं उसी प्रकार अनिष्ट फलदायी होने से व्रत क्रिया इष्टार्थ रूप नहीं, परन्तु अनिष्टार्थ ही है। १४९

(श्री राजमल्ल जी, पंचाध्यायी, भाग-२, गाथा-५६८)

* जिसके भीतर ज्ञानस्वभावी आत्मा का प्रकाश नहीं है उसका व्रत करना तप पालना, क्रिया करना, उपसर्ग सहना निष्फल है। आत्मज्ञान स्वभाव के प्रकाश बिना अन्य अनेक प्रकार सर्व चारित्र निंदा के योग्य हैं।

(श्री तारणस्वामी, ज्ञानसमुच्चयसार, श्लोक-२२७) १५०

* पुण्य-पाप के कारण संसार वन में प्रवेश होता है, ऐसा जानकर जो शुद्ध-बुद्धि है वह पुण्य-पाप में भेद नहीं करता, दोनों को संसार वन में भ्रमण करने की दृष्टि से समान समझता है। *(श्री अमितगति आचार्य, गाथा-४०)* १५१

* पुण्य और पाप में अंतर नहीं है ऐसा जो नहीं मानता, वह मोहाच्छादित होता हुआ घोर अपार संसार में परिभ्रमण करता है। *(श्री कुंद-कुंदाचार्य, ७७)* १५२

* जितना शुभ-अशुभ क्रियारूप आचरण अथवा बाह्यरूप व्यक्त अथवा सूक्ष्म अंतरंगरूप चिन्तवन, अभिलाष, स्मरण इत्यादि हैं वह समस्त अशुद्धत्वरूप परिणमन हैं, शुद्ध परिणमन नहीं, इसलिए बंध का कारण हैं, मोक्ष का कारण नहीं हैं। इस कारण जिस प्रकार कामला का सिंह कहने के लिए सिंह है, उसी प्रकार आचरणरूप (क्रियारूप) चारित्र कहने के लिए चारित्र है, परन्तु चारित्र नहीं है, निःसंदेह रूप से ऐसा जानो।

(श्री राजमल्लजी, कलश-टीका, कलश-१०७) १५३

* बुद्धि की मंदता से ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए कि शुभोपयोग एक देश से भी निर्जरा का कारण होता है। कारण कि शुभोपयोग, अशुभ को लाने वाला होने से वह निर्जरादिक का कारण नहीं हो सकता और इसीलिये उसे शुभ भी नहीं कह सकते। *(श्री राजमल्ल जी, पंचाध्यायी,)* १५४

* जिस प्रकार चंदन से उत्पन्न हुई अग्नि भी अवश्य जलाती है उसी प्रकार धर्म से उत्पन्न (प्राप्त) हुआ भोग भी अवश्य दुःखों को प्रदान करता है।

(अमितगति आचार्य, योगसार प्राभृत, अधि. ९, गाथा-२५) १५५

* जिसके रागरेणुकी कणिका भी हृदय में जीवित है वह, भले ही समस्त सिद्धान्त सागर का पारंगत है। तथापि, निरूपराग-शुद्धस्वरूप स्वसमय को वास्तव में नहीं चेतता (अनुभव नहीं करता) । इसलिए धुनकी से चिपकी हुई रुई का न्याय लागू होने से जीव को स्वसमय की प्रसिद्धि के हेतु अर्हंतादि-विषयक भी रागरेणु (अर्हंतादि की ओर की भी रागरज) क्रमशः दूर करने योग्य है। *(श्री अमृतचन्द्राचार्य, पंचास्तिकाय-टीका, १६७)* १५६

* समस्त सुकृत (शुभ-कर्म) भोगियों के भोग का मूल है, परमतत्व के अभ्यास में निष्णात चित्तवाले मुनीश्वर भवसे विमुक्त होने हेतु उस समस्त शुभकर्म को छोड़ो और सारतत्वस्वरूप ऐसे अभय समयसार को भजो। इसमें क्या दोष है ? *(श्री पद्मप्रभमलधारिदेव, नियमसार-टीका श्लोक-५९)* १५७

* हे जीव ! यदि तू आत्मा को नहीं जानेगा और मात्र पुण्य ही पुण्य करता रहेगा, तो भी तू सिद्ध सुख को नहीं पा सकता; किन्तु पुनः पुनः संसार में ही भ्रमण करेगा। *(श्री योगीन्द्र देव, योगसार, गाथा-१५)* १५८

more will continue

TELEPHONE SWADHYAY

Swadhyay schedule table is compiled from various sources. Following are the schedules in Hindi. If you find any error, omission or editorial mistakes then please let us know.

विद्वान	टेलीफोन #	कोड #	स्वाध्याय	समय (USA-EST)	विषय
अर्चनाजी	1-805-399-1000	303011#	M-F	9:00-9:50 am	मोक्षमार्ग प्रकाशक
संजीवजी	1-805-399-1000	303011#	M-F	8:15 – 9:00 am	राजवार्तिक ग्रन्थ
जीनलबेन	1-712-432-0900	781381#	M-F	11:00 – 11:45 am	वीतराग विज्ञान पाठमाला भाग-३
हेमचंदजी	1-712-432-0075	307701#	Saturday	10:30 -11:15 am	प्रवचनसार
अल्पनाजी	1-805-399-1000	303011#	M,W,F	8:00 -8:45 pm	समयसार
चैतन्यजी	1-805-399-1000	303011#	T, Th, Su	8:00 -8:45 pm	द्रव्य गुण पर्याय